वनाधिकार कानून
11 जमीनी मुद्दे और समाधान

प्रशिक्षण मॉड्यूल

भाग–1

माड्यूल का शीर्षक	:	**सामुदायिक वनाधिकार प्रशिक्षण मॉड्यूल-1**
लेखक	:	**अनिल गर्ग**
सहयोग	:	**प्रमोद विश्वकर्मा**
सम्पादन	:	**राकेश कुमार मालवीय**
वर्ष	:	**2025**
प्रतियां	:	**300**
प्रकाशक	:	**बुनियाद बैतूल**
पता	:	**कोठी बाजार, बैतूल**
सहयोग	:	**अजीम प्रेमजी फाउंडेशन**
मुद्रक	:	**अमित प्रकाशन, भोपाल**
ई-मेल	:	**buniyadsws@gmail.com**
मोबाइल	:	**9425636979**

भूमिका

वनाधिकार कानून बनाया और लागू किया गया, उसकी मंशा यही थी कि ऐतिहासिक अन्याय को ठीक किया जा सके, लेकिन इसके लचर क्रियान्वयन से यह कानून अब तक भी अपनी मंशा को ठीक तरह से पूरी नहीं कर पाया है। ऐतिहासिक भ्रम और अब तक इन्हें सुलझाने के लिए अपनाए गए अप्रभावी तरीकों के कारण जमीनी रूप से 11 प्रकार के विषय मौजूद हैं। इन मुद्दों की पहचान मध्य प्रदेश में मौजूदा भूमि विवादों पर गठित एक टास्क फोर्स की रिपोर्ट में भी की गई है और उन्हें दस्तावेज़ीकृत किया गया है।

राज्य सरकार को इन ऐतिहासिक समस्याओं के समाधान हेतु कुछ त्वरित कदम उठाने थे, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि इन लंबे समय से चले आ रहे मुद्दों के समाधान के लिए राजनीतिक और प्रशासनिक इच्छाशक्ति का अभाव है।

सदियों से वनों में या उनके आसपास रहने वाले समुदायों के न्यायसंगत दृष्टिकोण से देखें तो ये मुद्दे उन्हें भूमि और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर उनके अधिकारों और पात्रताओं से वंचित करते रहे हैं। भारत के संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों के बाद पंचायती राज संस्थाएँ अस्तित्व में आईं, जिनका उद्देश्य ग्राम सीमाओं के भीतर मौजूद संसाधनों पर अधिकार और पात्रताओं को सुनिश्चित करना था।

73वें संशोधन के बाद जोड़ी गई 11वीं अनुसूची ग्राम पंचायतों को संसाधनों तक पहुँच, प्रबंधन और नियंत्रण के अधिकार देती है। बाद में, वर्ष 2006 में वनाधिकार कानून (वनाधिकार कानून) ने इसे और आगे बढ़ाते हुए ग्राम सभाओं को इन संसाधनों पर अंतिम निर्णयकर्ता प्राधिकरण बनाया। अनुसूची पांच क्षेत्रों में पेसा (PESA) भी ग्राम सभाओं को संसाधनों पर निर्णय लेने के लिए वैधानिक ढांचा और अधिकार प्रदान करता है।

इस संदर्भ में, ये मुद्दे एक बॉटलनेक की तरह बन गए हैं, जो वनाधिकार, पेसा और पंचायती राज के समुचित क्रियान्वयन को बाधित करते हैं; और बड़ी आबादी को उनके मूल अधिकारों के उपभोग से वंचित कर उनके जीवन और आजीविका पर संकट थोपते हैं।

इन मुद्दों की समझ विकसित करने और उन्हें स्वीकारने के लिए सूचना और प्रसार, जागरूकता निर्माण तथा समझ बढ़ाने के रूप में एक सुव्यवस्थित प्रयास आवश्यक है—जो ज़मीनी स्तर पर सामाजिक कार्रवाई को प्रेरित करे और इन लंबे समय से चली आ रही अन्यायपूर्ण स्थितियों तथा लंबित गंभीर समस्याओं के न्यायोचित समाधान की वकालत कर सके। यह मॉड्यूल एक ऐसा ही प्रयास है, जिसमें सरल और आसान भाषा में इन विषयों को अलग अलग स्तर पर समाधान के कुछ रास्ते दिखाने की कोशिश की है। इनका उपयोग अलग-अलग स्तरों पर बैठक और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में की जा सकती है।

उम्मीद है इस पहल से ऐतिहासिक अन्याय को ठीक करने की दिशा में एक नई रोशनी मिलेगी।

– अनिल गर्ग

इस मॉडयूल के बारे में:

आपने इस मॉडयूल के पहले भाग में वन और समुदाय के रिश्ते, वनाधिकार से संबंधित ऐतिहासिक स्थितियां, वनाधिकार से संबंधित तमाम नियम और कानून, तकनीकी शब्दावलियां, वनाधिकार कानून से संबंधित प्रावधानों और चुनौतियों के बारे में अपनी समझ बनाई है।

यह मॉडयूल का दूसरा भाग है जो और भी महत्वपूर्ण है। इस मॉडयूल में हमने वह 11 विषय लिए हैं, जो वनाधिकार की राह में बड़ी चुनौतियां बनकर उभरी हैं। इसमें वन और राजस्व विभाग से संबंधित पेंचीदगियां और विरोधाभास निकलकर आते हैं, कि किस तरह से लोगों को उनकी ही जमीन पर अतिक्रमणकारी मानकर बेदखल भी किया गया है।

इस भाग में हमने इन गंभीर विषयों पर समझ बनाने और अपने आसपास से जोड़कर देखने के लिए काल्पनिक कहानियों के माध्यम स्थिति को दर्शाया है। इसके साथ ही समाधान का क्या तरीका हो सकता है, उसे भी सामने लाने की कोशिश की है।

विषय

- डीनोटिफिकेशन की प्रत्याशा में जारी पट्टे, जो अधूरे रह गए 5
- कहानी: जंगल के बीच अटका हुआ पट्टा 6
- आरक्षित वनों की अधिसूचना की कार्यवाही अधूरी रहना 10
- आरक्षित वनों की अधिसूचना की अधूरी प्रक्रिया और सामुदायिक वनाधिकार 11
- अभिलेखों का मिलान और अद्यतन न होना 14
- “दो अभिलेखों के बीच फंसा सोनपुर गांव” 15
- वनों को बाहर रखने हेतु ग्राम सीमाओं में परिवर्तन 18
- बदलती सीमाएं, सिमटता गांव 19
- रैयतवारी गांवों के वन संरक्षित वन खंडों में शामिल 23
- बेलतरी गांव का जंगल 24
- गैर-वन, राजस्व भूमि का संरक्षित वन खंडों में शामिल होना 26
- खेत से जंगल तक: कागजों में खो गई धरती 27
- राजस्व भूमि के अभिलेखित क्षेत्रफल और वास्तविक संरक्षित वन क्षेत्र में असंगति 30
- कागज में जंगल, जमीन पर गांव 31
- संरक्षित वनों पर जारी पट्टे 34
- पट्टा, जंगल और पहचान 35
- निजी भूमि का वन खंडों में शामिल होना 38
- खेत जो अचानक जंगल बन गया 39
- धारा 34(A) के तहत अधिसूचित वन भूमि पर वनाधिकार प्रमाणपत्र 42
- धारा 34(A) की जमीन और रामलाल का वनाधिकार प्रमाणपत्र 43
- डीनोटिफाइड भूमि पर निस्तारण अधिकार 45
- लौटता हुआ हक़ 46
- वन व्यवस्थापन और आवश्यक जानकारी 48
- वनखण्ड में शामिल भूस्वामी हक की भूमियों पर प्रतिवेदन 49
- एवं जांच का प्रकरण 49
- वनमंडल से आवश्यक जानकारी 50
- धारा 29 एवं धारा 4 में अधिसूचित भूमि” 51
- राजस्व पटवारी की महत्वपूर्ण भूमिका 52
- “अनुविभागीय अधिकारी/वनव्यवस्थापन अधिकारी की भूमिका” 53
- संविधान कानून, न्यायालीन आदेश 54

भाग 1

डीनोटिफिकेशन की प्रत्याशा में जारी पट्टे, जो अधूरे रह गए

विषय:

मध्य प्रदेश सरकार ने वर्ष 1966 और 1975 में संरक्षित वन खंडों से छोड़ी गई भूमि पर व्यक्तिगत पट्टे जारी किए। किंतु इन भूमियों के डीनोटिफिकेशन और निस्तारण (सेटलमेंट) अधिकारों की प्रक्रिया आज तक अधूरी है।

एक कहानी से समझें

कहानी: जंगल के बीच अटका हुआ पट्टा

मध्य प्रदेश के मंडला जिले के एक छोटे से गांव सोनपुरा में रहने वाले रामलाल बैगा के पिता को साल 1975 में सरकार की ओर से एक पट्टा मिला था। यह पट्टा उस जमीन का था, जो पहले संरक्षित वन खंड में आती थी, लेकिन बाद में सरकार ने खेती के लिए कुछ परिवारों को दे दी थी।

पट्टा मिलने के बाद रामलाल के पिता ने वहां झोपड़ी बनाई, खेत जोता और सालों तक उसी जमीन पर परिवार पाला। गांव के लोग जानते थे कि यह जमीन "सरकारी पट्टे" की है। राजस्व रिकॉर्ड में भी उसका नाम दर्ज हो गया, लेकिन वन विभाग के रिकॉर्ड में वह जमीन अब भी वन के रूप में दर्ज थी।

समय बीतता गया। रामलाल के पिता गुजर गए और खेती की जिम्मेदारी रामलाल पर आ गई। जब रामलाल ने बैंक से खेती के लिए ऋण लेना चाहा, तो बैंक ने जमीन के कागजात मांगे। राजस्व विभाग ने कहा—"पट्टा तो है, लेकिन जमीन का डि-नोटिफिकेशन पूरा नहीं हुआ है।" वहीं वन विभाग ने कहा—"यह अभी भी वन भूमि है, यहां खेती अवैध मानी जाएगी।"

रामलाल समझ नहीं पाया कि गलती उसकी है या व्यवस्था की। सरकार ने जमीन दी, लेकिन उसे पूरी तरह वन से बाहर करने की प्रक्रिया अधूरी छोड़ दी। न तो निस्तारण (सेटलमेंट) हुआ, न ही वन और राजस्व रिकॉर्ड एक जैसे बनाए गए।

कुछ साल बाद वनाधिकार कानून की चर्चा गांव तक पहुंची। ग्राम सभा में बताया गया कि ऐसी जमीनों पर रहने और खेती करने वाले परिवार व्यक्तिगत वनाधिकार का दावा कर सकते हैं। रामलाल ने आवेदन किया, पुराने पट्टे की प्रति लगाई, गांव के बुजुर्गों के बयान जोड़े।

लेकिन प्रक्रिया फिर अटक गई। अधिकारी बोले—"पहले पुराने डि-नोटिफिकेशन और निस्तारण की स्थिति साफ करनी होगी।" आज रामलाल की स्थिति यह है कि वह उसी जमीन पर खेती करता है, लेकिन डर के साथ। कभी वन विभाग की कार्रवाई का डर, कभी जमीन छिन जाने का। पट्टा होते हुए भी जमीन पर उसका अधिकार पूरी तरह सुरक्षित नहीं है।

यह कहानी दिखाती है कि—

- सरकार द्वारा संरक्षित वन से छोड़ी गई भूमि पर पट्टे तो दिए गए
- लेकिन डि-नोटिफिकेशन और निस्तारण की प्रक्रिया अधूरी रही
- वन और राजस्व विभाग के रिकॉर्ड में विरोधाभास बना रहा
- इसका खामियाजा जमीन पर रहने वाले आदिवासी और ग्रामीण परिवारों को भुगतना पड़ा

समस्या का मूल

मध्यप्रदेश में 1966 और 1975 में जिन लोगों को संरक्षित वन से छोड़ी गई भूमि पर व्यक्तिगत पट्टे दिए गए:

- भूमि का डिनोटिफिकेशन पूरा नहीं हुआ
- भूमि का नोटिफिकेशन किया लेकिन अभिलेख संशोधन आज भी नहीं हुए।
- राजस्व रिकॉर्ड में सही दर्ज नहीं हुई
- निस्तारण (सेटलमेंट) अधिकार अधूरे रह गए,

इस वजह से लोग न वनाधिकार कानून में स्पष्ट हैं, न राजस्व कानून में सुरक्षित।

समाधान के संभावित रास्ते

ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर अधिकार की पुष्टि

पट्टाधारकों के पास अक्सर ये प्रमाण होते हैं:

- 1966/1975 के सरकारी पट्टे
- लगान/राजस्व रसीदें
- खेती या निवास का लंबा रिकॉर्ड
- डिनोटिफिकेशन के आधार पर अभिलेख संशोधन पर सरकार ध्यान दे

इन दस्तावेज़ों के आधार पर यह सिद्ध किया जा सकता है कि यह भूमि पहले ही लोगों को दी जा चुकी थी, इसलिए इसे अवैध अतिक्रमण नहीं माना जा सकता।

- वनाधिकार कानून (FRA, 2006) का उपयोग: यदि भूमि पर 13 दिसंबर 2005 से पहले कब्जा है, खेती/निवास पीढ़ियों से चला आ रहा है तो व्यक्तिगत वनाधिकार (IFR) का दावा

यदि पूरा गांव प्रभावित है या सामुदायिक वनाधिकार (CFR) से समाधान हो सकता है।

डिनोटिफिकेशन की लंबित प्रक्रिया को पूरा करवाना

राज्य सरकार के स्तर पर:

- वन विभाग और राजस्व विभाग की संयुक्त समीक्षा
- जिन खंडों को छोड़ा गया था, उन्हें औपचारिक रूप से वन सूची से हटाना
- भूमि को राजस्व रिकॉर्ड में संशोधित करना

इसके लिए जिला स्तर पर विशेष समिति बनाई जा सकती है।

विशेष निस्तारण नीति

सरकार चाहे तो 1966/1975 के पट्टों को मान्यता देने की विशेष नीति बना सकती है। लंबित मामलों को एक साथ सुलझा सकती है इससे हजारों परिवारों को कानूनी सुरक्षा मिल सकती है।

सामूहिक दावा और सामूहिक दबाव

अनुभव बताता है कि एकल मामलों में प्रक्रिया धीमी रहती है, लेकिन ग्राम सभा आधारित सामूहिक दावे ज्यादा प्रभावी होते हैं, समाधान के लिए ज़रूरी है:

- ग्राम सभा प्रस्ताव
- दस्तावेज़ों का संकलन
- प्रशासन से सामूहिक संवाद

न्यायिक रास्ता यदि प्रशासनिक स्तर पर समाधान न हो: उच्च न्यायालय में याचिका लगाई जा सकती है.

भाग 2

आरक्षित वनों की अधिसूचना की कार्यवाही अधूरी रहना

विषय:

आरक्षित वन की अधिसूचना की प्रक्रिया भारतीय वन अधिनियम (IFA) की धारा 5 से 19 तक की प्रक्रिया पूरी होने पर ही पूर्ण मानी जाती है। कई भूमि खंड IFA की धारा 4 के अंतर्गत अधिसूचित हैं। बाद में इन्हें वनाधिकार अधिनियम (FRA) की धारा 3(1)(b) के तहत सामुदायिक वनाधिकार के रूप में मान्यता दी जा सकती थी, लेकिन यह प्रक्रिया शुरू नहीं की गई।

एक कहानी से समझें

आरक्षित वनों की अधिसूचना की अधूरी प्रक्रिया और सामुदायिक वनाधिकार

मध्य प्रदेश के मंडला जिले के धनपुर गांव के आसपास लगभग 450 हेक्टेयर वन भूमि है। वर्ष 1982 में इस क्षेत्र को भारतीय वन अधिनियम, 1927 (IFA) की धारा 4 के अंतर्गत आरक्षित वन घोषित करने की प्रारंभिक अधिसूचना जारी की गई थी। इसके बाद कानूनन धारा 5 से 19 तक की प्रक्रियाएं—जैसे अधिकारों की जांच, दावे आमंत्रित करना, आपत्तियों का निराकरण और अंतिम अधिसूचना—पूरी की जानी थीं।

लेकिन व्यवहार में यह प्रक्रिया अधूरी रह गई। न तो गांव के लोगों से उनके परंपरागत अधिकारों के दावे बुलाए गए, न ही अंतिम अधिसूचना जारी की गई।

धनपुर गांव के आदिवासी समुदाय पीढ़ियों से इस वन पर निर्भर रहे हैं। वे यहां से ईंधन लकड़ी, तेंदूपत्ता, महुआ, चिरौंजी जैसे लघु वनोपज एकत्र करते हैं और कुछ हिस्सों में सामुदायिक खेती भी करते आए हैं।

2006 में वनाधिकार अधिनियम (FRA) लागू होने के बाद यह भूमि धारा 3(1)(b) के अंतर्गत सामुदायिक वनाधिकार (CFR) के लिए पात्र थी, क्योंकि, यह क्षेत्र अंतिम रूप से आरक्षित वन घोषित नहीं हुआ था समुदाय का परंपरागत उपयोग और निर्भरता स्पष्ट थी, लेकिन वन विभाग ने इसे "आरक्षित वन प्रस्तावित क्षेत्र" मानते हुए CFR दावों की प्रक्रिया शुरू ही नहीं की।

अधिसूचना अधूरी होने के बावजूद वन विभाग का नियंत्रण बना रहा, ग्रामसभा को कानूनी अधिकार नहीं मिल सके, लघु वनोपज संग्रह पर प्रतिबंध और जुर्माने लगाए गए, वनाधिकार कानून के तहत सामुदायिक अधिकारों की मान्यता नहीं हो पाई। इसके परिणामस्वरूप, समुदाय "वन पर निर्भर" होने के बावजूद "अतिक्रमणकारी" की स्थिति में बना रहा।

यह कहानी दिखाती है कि—

- भारतीय वन अधिनियम की अधिसूचना प्रक्रिया का अधूरा रहना प्रशासनिक चूक है
- ऐसी भूमि को स्वतः आरक्षित वन मान लेना कानून सम्मत नहीं है
- FRA लागू होने के बाद ऐसी भूमि पर CFR दावों की प्रक्रिया शुरू करना अनिवार्य था

यह एक कानूनी अस्पष्टता नहीं, बल्कि प्रशासनिक उदासीनता का उदाहरण है।

समाधान के संभावित रास्ते

1. कानूनी स्पष्टता और पुनर्समीक्षा

- राज्य स्तर पर उन सभी वन खंडों की सूची उपलब्ध है केवल भारतीय वन अधिनियम धारा 4 तक अधिसूचित हैं, उसको मान्यता दी जाए
- यह स्पष्ट किया गया है कि ऐसे वन खंड वनाधिकार कानून के अनुसार CFR के लिए वैधानिक रूप से पात्र हैं

2. ग्रामसभा आधारित प्रक्रिया

- संबंधित ग्रामसभाओं को लिखित रूप से सूचित किया जाए
- वनाधिकार कानून की धारा 3(1)(b) के तहत सामुदायिक वनाधिकार दावे आमंत्रित किए जाएं
- वन अधिकार समिति (FRC) को पुनः सक्रिय किया जाए

3. संयुक्त सत्यापन

- राजस्व, वन और पंचायत विभाग की संयुक्त टीम द्वारा जमीनी सत्यापन
- समुदाय की पारंपरिक निर्भरता, उपयोग और संरक्षण भूमिका का दस्तावेजीकरण

4. अंतरिम संरक्षण अधिकार

- अंतिम निर्णय तक ग्रामसभा को लघु वनोपज संग्रह और प्रबंधन का अंतरिम अधिकार
- वन विभाग द्वारा दंडात्मक कार्रवाई पर रोक

5. नीतिगत सुधार

- राज्य सरकार द्वारा स्पष्ट दिशानिर्देश जारी हों कि
    - भारतीय वन अधिनियम की अधूरी अधिसूचना वनाधिकार कानून अधिकारों में बाधा नहीं बनेगी
- जिला स्तर पर वनाधिकार कानून निगरानी तंत्र को मजबूत किया जाए

निष्कर्ष

आरक्षित वन की अधूरी अधिसूचना न केवल कानूनी असमंजस पैदा करती है, बल्कि समुदायों को उनके संवैधानिक अधिकारों से भी वंचित करती है। यदि भारतीय वन अधिनियम और वनाधिकार कानून के बीच समन्वय स्थापित किया जाए और ग्रामसभा को केंद्र में रखा जाए, तो ऐसे विवादों का न्यायपूर्ण और टिकाऊ समाधान संभव है।

भाग 3

अभिलेखों का मिलान और अद्यतन न होना

विषय:

वन विभाग ने खाली पड़ी भूमि को संरक्षित वन मानना जारी रखा। राज्य सरकार की अधिसूचनाओं के बावजूद राजस्व और वन—दोनों विभागों ने अभिलेखों में संशोधन नहीं किया। इसके परिणामस्वरूप एक बड़ा संकट खड़ा हुआ—मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में 90 लाख हेक्टेयर से अधिक भूमि दोनों विभागों के अभिलेखों में समानांतर प्रविष्टियों के कारण अतिरिक्त बताई जा रही है।

इस भ्रम का उदाहरण अविभाजित सीधी–शहडोल (म.प्र.) का मामला है, जहाँ लगभग 5 लाख हेक्टेयर भूमि राजस्व और वन अभिलेखों से गायब हो गई है, जिससे वह बुनियादी सुविधाओं और कल्याणकारी योजनाओं से वंचित और उपेक्षित पड़ी है।

एक कहानी से समझें

"दो अभिलेखों के बीच फंसा सोनपुर गांव"

मध्य प्रदेश के पुराने सीधी–शहडोल अंचल में एक छोटा सा गांव था—सोनपुर। यह गांव घने जंगलों और पहाड़ियों के बीच बसा था। यहां रहने वाले लोग पीढ़ियों से खेती करते आए थे, जंगल से महुआ, तेंदूपत्ता और लकड़ी लाकर अपना जीवन चलाते थे।

सोनपुर के बुजुर्ग बताते थे कि आज़ादी के बाद यह जमीन राजस्व रिकॉर्ड में गांव की कृषि भूमि के रूप में दर्ज थी। लेकिन 1970 के दशक में वन विभाग ने इस क्षेत्र को संरक्षित वन मानते हुए अपने रिकॉर्ड में दर्ज कर लिया। उस समय किसी ने गांव वालों को न बताया, न कोई सीमांकन हुआ।

समय बीतता गया। सरकार की ओर से कई अधिसूचनाएँ आईं, जिनमें कहा गया कि कुछ भूमि को वन श्रेणी से बाहर किया गया है। लेकिन राजस्व और वन—दोनों विभागों ने अपने अभिलेखों में सुधार नहीं किया। नतीजा यह हुआ कि सोनपुर की ज़मीन दोनों विभागों के रिकॉर्ड में अलग-अलग तरीके से दर्ज हो गई।

गांव वालों की परेशानी तब बढ़ी जब उन्होंने प्रधानमंत्री आवास, सड़क, स्कूल और बिजली जैसी योजनाओं के लिए आवेदन किए। हर बार जवाब मिलता, राजस्व विभाग कहता: "यह भूमि वन की है।" वन विभाग कहता: "यह हमारी भूमि है, यहां निर्माण नहीं हो सकता।"

धीरे-धीरे सोनपुर ऐसा गांव बन गया, जो न तो पूरी तरह राजस्व गांव था, न ही विधिवत वन गांव। सरकारी नक्शों में वह कहीं दिखता था, कहीं नहीं। यही हाल आसपास के सैकड़ों गांवों का था।

जब जिले में सर्वे हुआ तो पता चला कि अविभाजित सीधी–शहडोल क्षेत्र में लगभग 5 लाख हेक्टेयर भूमि अभिलेखों के भ्रम में 'गायब' हो चुकी है। यही स्थिति मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में मिलाकर 90 लाख हेक्टेयर से अधिक भूमि की थी—जो काग़ज़ों में उलझी, लेकिन ज़मीन पर लोगों की ज़िंदगी से जुड़ी थी।

यह कहानी दिखाती है कि—

- वन और राजस्व विभाग के अभिलेखों का मिलान नहीं हुआ
- अधिसूचनाओं के बाद भी रिकॉर्ड अपडेट नहीं किए गए
- भूमि "डबल एंट्री" या "नो एंट्री" की स्थिति में फँस गई
- गांव बुनियादी सुविधाओं और कल्याणकारी योजनाओं से वंचित रह गए

समाधान के संभावित रास्ते:

"अभिलेख समन्वय और अधिकार बहाली मॉडल"

1. संयुक्त अभिलेख सत्यापन

- जिला स्तर पर राजस्व–वन–पंचायत की संयुक्त टीम बने
- उपग्रह नक्शे, पुराने बंदोबस्त रिकॉर्ड, कार्ययोजना और ग्राम साक्ष्य का मिलान हो

2. डबल एंट्री सुधार अभियान

- जहाँ भूमि दोनों रिकॉर्ड में दर्ज है, वहाँ एकल निर्णायक प्रविष्टि तय की जाए
- राज्य सरकार की अधिसूचनाओं के अनुसार रिकॉर्ड संशोधित हों

3. ग्राम-स्तरीय सार्वजनिक सुनवाई

- गांव में नक्शे और रिकॉर्ड सार्वजनिक रूप से रखे जाएं
- गांव के नक्शे निस्तार पत्रक अधिकार अभलेख 26 जनवरी 2001 के शासन्देश से ग्राम सभाओं को दिए गए थे जिन्हें तत्काल अद्यतन करवाया जाए
- ग्रामसभा से आपत्तियाँ और दावे लिए जाएं

4. वनाधिकार कानून के तहत अधिकारों की मान्यता

- ऐसी भूमि पर सामुदायिक और व्यक्तिगत वनाधिकार दावे स्वीकार किए जाएं
- अधिसूचित लेकिन अपूर्ण आरक्षित/संरक्षित वनों को वनाधिकार कानून की धारा 3(1)(b) से जोड़ा जाए

5. डिजिटल एकीकृत भूमि पोर्टल

- वन और राजस्व का कॉमन डिजिटल प्लेटफॉर्म बने
- हर बदलाव रियल-टाइम अपडेट हो

6. अंतरिम संरक्षण और सुविधा आदेश

- रिकॉर्ड सुधार तक
- सड़क, बिजली, पानी, आवास जैसी योजनाओं पर रोक न लगे

अपेक्षित परिणाम

- "गायब भूमि" फिर से शासन के नक्शे पर आएगी
- ग्रामीणों को अधिकार और योजनाओं का लाभ मिलेगा
- वन संरक्षण और आजीविका—दोनों में संतुलन बनेगा
- नोटिफाईड भूमि के अभिलेख संशोधन से अधिक राजस्व भूमि चिन्हांकित होगी जो भूमिहीनों में वितरित की जा सकती है।

भाग 4

वनों को बाहर रखने हेतु ग्राम सीमाओं में परिवर्तन

विषय:

राजस्व विभाग ने लगभग 40 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में वन सीमाओं में परिवर्तन कर उन्हें वन सीमाओं में शामिल करते हुए वन भूमि घोषित कर दिया।

एक कहानी से समझें

बदलती सीमाएं, सिमटता गांव

मध्य प्रदेश के एक आदिवासी बहुल इलाके में धरमपुर नाम का एक छोटा-सा गांव था। यह गांव पीढ़ियों से खेती, वनोपज संग्रह और पशुपालन पर निर्भर रहा था। गांव की सीमाएँ राजस्व रिकॉर्ड में स्पष्ट दर्ज थीं और लोग इन्हीं सीमाओं के भीतर अपनी ज़मीन पर खेती करते आ रहे थे।

एक दिन अचानक गांव में चर्चा फैलने लगी कि कुछ खेत अब वन भूमि बताई जा रही हैं। किसानों को समझ नहीं आ रहा था कि जिस ज़मीन पर वे वर्षों से खेती कर रहे हैं, वह अचानक वन कैसे हो गई।

दरअसल, कुछ साल पहले राजस्व विभाग ने ग्राम सीमाओं में बदलाव किया था। कागज़ों में यह बदलाव “प्रशासनिक सुविधा” के नाम पर किया गया, लेकिन ज़मीनी स्तर पर इसकी कोई जानकारी न ग्राम सभा को दी गई, न ही ग्रामीणों को। इसी प्रक्रिया में गांव की सीमा को पीछे खिसका दिया गया और आसपास के जंगलों के साथ-साथ गांव की उपयोग में आने वाली भूमि भी वन सीमा में शामिल कर दी गई।

जब वन विभाग की टीम सर्वे के लिए पहुँची, तो उन्होंने राजस्व के नए नक्शों के आधार पर कई खेतों को वन अतिक्रमण मान लिया। किसानों को नोटिस मिले, खेती पर रोक लगाई गई और कुछ परिवारों को बेदखली का डर सताने लगा।

धरमपुर की सीता बाई, जो स्वयं सहायता समूह चलाती थीं, ने ग्राम सभा की बैठक बुलाई। बैठक में पता चला कि न तो ग्राम सभा से सहमति ली गई थी, न ही वनाधिकार कानून के तहत किसी तरह की प्रक्रिया अपनाई गई थी। गांव की सीमा बदलने से न केवल ज़मीन छीनी जा रही थी, बल्कि लोगों के वनाधिकार, आजीविका और पहचान पर भी संकट खड़ा हो गया था।

धीरे-धीरे स्कूल की ज़मीन, चरागाह और यहां तक कि गांव का तालाब भी वन भूमि के नक्शे में दिखने लगा। सरकारी योजनाएँ रुक गईं क्योंकि रिकॉर्ड में गांव का बड़ा हिस्सा “वन क्षेत्र” बन चुका था।

धरमपुर का यह मामला अकेला नहीं था। आसपास के कई गांव इसी तरह ग्राम सीमाओं में बदलाव के कारण अपने अधिकारों से वंचित हो रहे थे।

यह कहानी दिखाती है कि—

- ग्राम सीमाओं में परिवर्तन केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि सामाजिक-कानूनी प्रभाव वाला निर्णय है।
- बिना ग्राम सभा की सहमति सीमा परिवर्तन करना संविधान और वनाधिकार कानून की भावना के विरुद्ध है।
- रिकॉर्ड आधारित फैसले ज़मीनी सच्चाई से मेल न खाने पर बड़े सामाजिक संघर्ष को जन्म देते हैं।
- वन और राजस्व विभाग के बीच समन्वय की कमी सबसे बड़ा कारण बनती है।
- गांव की सीमा को कम करने और भूमि को पृथक करने किसी कानून में प्रावधान ही नहीं है।

समाधान के संभावित रास्ते:

अभिलेखों की संयुक्त समीक्षा

- सबसे पहले राजस्व विभाग और वन विभाग की संयुक्त टीम बनाई जानी चाहिए।
- यह टीम ग्राम नक्शों, मिसल बंदोबस्त, खतौनी, वन नक्शों और अधिसूचनाओं का मैदान में जाकर मिलान करे
- जिस भूमि पर लंबे समय से खेती, आबादी या सामुदायिक उपयोग हो रहा है, उसे केवल नक्शे के आधार पर वन मानना रोका जाए।

ग्राम सभा की भूमिका को मान्यता

ग्राम सीमाओं में बदलाव या वन भूमि की पहचान से पहले ग्राम सभा की सहमति अनिवार्य की जाए।

वनाधिकार अधिनियम (वनाधिकार कानून) के तहत ग्राम सभा को यह अधिकार है कि वह बताए:

- कौन सी भूमि पर उसका परंपरागत अधिकार है

- कौन सा क्षेत्र वास्तविक वन है और कौन नहीं

ग्राम सभा के प्रस्तावों को अभिलेखों का हिस्सा बनाया जाए।

वनाधिकार अधिनियम (FRA) का पूर्ण क्रियान्वयन

जहाँ ग्राम सीमाओं के बदलाव से लोगों के अधिकार प्रभावित हुए हैं, वहाँ सामुदायिक वनाधिकार (CFR) और व्यक्तिगत वनाधिकार (IFR) के दावे विशेष अभियान चलाकर स्वीकार किए जाएं।

यह प्रक्रिया समस्या का स्थायी समाधान देती है।

गलत अधिसूचनाओं का पुनरीक्षण (Review & Rectification)

जिन क्षेत्रों को केवल प्रशासनिक निर्णय से वन घोषित किया गया है:

- उनकी पुनः समीक्षा की जाए
- आवश्यकता होने पर डीनोटिफिकेशन की प्रक्रिया अपनाई जाए

राज्य सरकार स्तर पर एक विशेष समीक्षा समिति बनाई जा सकती है।

अभिलेखों का डिजिटलीकरण और एकीकरण

राजस्व और वन विभाग के अभिलेखों को:

- एक साझा डिजिटल प्लेटफॉर्म पर लाया जाए
- एक भूमि की दोहरी प्रविष्टि (डुप्लीकेट एंट्री) रोकी जाए

इससे भविष्य में ऐसे विवाद दोबारा नहीं होंगे।

अंतर-विभागीय समन्वय तंत्र

स्थायी समाधान के लिए:

- जिला स्तर पर वन–राजस्व समन्वय समिति
- नियमित बैठकें और संयुक्त आदेश

ताकि कोई भी विभाग अकेले निर्णय न ले सके।

प्रभावित ग्रामों के लिए राहत और विकास

जब तक विवाद सुलझे:

- बुनियादी सुविधाएँ (पानी, सड़क, राशन, बिजली)
- कल्याणकारी योजनाओं का लाभ

इन ग्रामों को अंतरिम रूप से दिया जाए, ताकि लोग उपेक्षित न रहें।

निष्कर्ष

यह समस्या केवल नक्शों या सीमाओं की नहीं है, बल्कि अधिकार, आजीविका और न्याय की है। यदि ग्राम सभा, वनाधिकार कानून, और विभागीय समन्वय को केंद्र में रखा जाए, तो वन संरक्षण भी संभव है, लोगों के अधिकार भी सुरक्षित रहते हैं।

भाग 5

रैयतवारी गांवों के वन संरक्षित वन खंडों में शामिल

विषय:

मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में लगभग 10% रैयतवारी गांव हैं। इन गांवों की सामुदायिक भूमि को बिना किसी वैधानिक प्रावधान के वन विभाग ने वन मान लिया। जबकि संविधान की 11वीं अनुसूची, पेसा (PESA) और वनाधिकार कानून के अनुसार ये भूमि समुदाय के नियंत्रण में होनी चाहिए।

एक कहानी से समझें

बेलतरी गांव का जंगल

मध्य प्रदेश के विंध्य क्षेत्र में एक छोटा-सा गांव था— बेलतरी। यह गांव रैयतवारी गांवों में गिना जाता था। पीढ़ियों से यहां के लोग अपनी सामुदायिक भूमि पर खेती करते थे, महुआ, तेंदू और चिरौंजी बटोरते थे, और जंगल को अपना जीवन-साथी मानते थे।

गांव की सबसे बुजुर्ग महिला धनी बाई अक्सर कहती थीं —"यह जंगल हमारा है, हमारे पूर्वजों ने इसे बचाया है।" लेकिन एक दिन अचानक सब कुछ बदल गया। वन विभाग की एक टीम गांव पहुँची और बताया कि बेलतरी की सामुदायिक भूमि अब संरक्षित वन खंड में दर्ज है। न कोई नोटिस, न कोई ग्राम सभा, न कोई सुनवाई। लोग हैरान रह गए। अब न तो वे लकड़ी ले सकते थे, न महुआ बीन सकते थे, और न ही निस्तार के अधिकार बचे।

ग्राम पंचायत ने पूछा — "यह कैसे हो सकता है? यह तो रैयतवारी गांव है।" वन अधिकारी का जवाब था —"रिकॉर्ड में यह वन है।" धीरे-धीरे हालात बिगड़ने लगे। मनरेगा के काम रुके,

नल-जल योजना अटक गई, और स्कूल की चारदीवारी तक नहीं बन पाई, क्योंकि ज़मीन "वन" बताई जा रही थी।

गांव के युवा रामलाल ने जिला कार्यालय में जाकर जानकारी जुटाई। तब पता चला कि: गांव की सामुदायिक भूमि को बिना किसी वैधानिक प्रक्रिया के वन रिकॉर्ड में डाल दिया गया है, न तो भारतीय वन अधिनियम (भारतीय वन अधिनियम) की प्रक्रिया पूरी हुई न ही ग्राम सभा से सहमति ली गई और न ही वनाधिकार कानून, PESA और संविधान की 11वीं अनुसूची का पालन हुआ बेलतरी गांव 'कागज़ों में जंगल' बन चुका था

लेकिन लोगों के जीवन से जंगल छिन गया था।

यह कहानी दिखाती है कि—

- रैयतवारी गांवों की सामुदायिक भूमि को बिना कानून के वन मान लिया गया
- ग्राम सभा की भूमिका पूरी तरह नजरअंदाज़ की गई

- राजस्व और वन विभाग के अभिलेखों में विरोधाभास बना
- समुदाय के संवैधानिक और कानूनी अधिकार प्रभावित हुए

समाधान के संभावित रास्ते:

"समुदाय–कानून–प्रशासन समन्वय मॉडल"

कानूनी स्पष्टता और मान्यता

- रैयतवारी गांवों की सामुदायिक भूमि को संविधान की 11वीं अनुसूची के तहत ग्राम सभा की संपत्ति माना जाए
- PESA और वनाधिकार कानून के प्रावधानों को स्पष्ट रूप से लागू किया जाए
- बिना अधिसूचना और सुनवाई के वन घोषित भूमि की समीक्षा की जाए

अभिलेखों का मिलान और सुधार

- राजस्व और वन विभाग के रिकॉर्ड का संयुक्त सत्यापन
- GIS मैपिंग + पुराने बंदोबस्त अभिलेखों का उपयोग
- गलत वन प्रविष्टियों को हटाने के लिए राज्य-स्तरीय टास्क फोर्स

वनाधिकार कानून के तहत अधिकारों की मान्यता

- ग्राम सभा द्वारा सामुदायिक वनाधिकार (CFR) और निस्तार अधिकारों के दावे विशेष अभियान चलाकर रैयतवारी गांवों को वनाधिकार कानून प्रक्रिया में लाना

ग्राम सभा को निर्णायक बनाना

- किसी भी भूमि-वर्गीकरण परिवर्तन से पहले
  - ग्राम सभा की लिखित सहमति अनिवार्य
- वन और राजस्व अधिकारियों की जवाबदेही तय

भाग 6

गैर-वन, राजस्व भूमि का संरक्षित वन खंडों में शामिल होना

विषय:

राजस्व और वन विभागों द्वारा समय-समय पर जारी सामान्य अधिसूचनाओं के माध्यम से केवल वही भूमि संरक्षित वन में बदली जानी थी, जो राजस्व अभिलेखों में वन के रूप में दर्ज थी। किंतु इन अधिसूचनाओं के क्रियान्वयन में गैर-वन राजस्व भूमि, जैसे सामुदायिक भूमि और प्राकृतिक रिक्त क्षेत्र भी वन विभाग को स्थानांतरित कर दिए गए और बाद में संरक्षित वन खंडों में शामिल कर लिए गए।

एक कहानी से समझें

खेत से जंगल तक: कागजों में खो गई धरती

मध्य प्रदेश के एक आदिवासी बहुल जिले में धनपुरा नाम का गांव था। गांव की सीमा पर कुछ ऐसी ज़मीनें थीं, जिन्हें लोग बरसों से चराई, लकड़ी इकट्ठा करने, और कुछ जगहों पर बरसाती खेती के लिए इस्तेमाल करते आ रहे थे। ये ज़मीनें राजस्व रिकॉर्ड में बंजर भूमि और प्राकृतिक रिक्त क्षेत्र के रूप में दर्ज थीं। सालों पहले सरकार की एक सामान्य अधिसूचना के बाद वन विभाग को कहा गया कि जिन राजस्व ज़मीनों को रिकॉर्ड में "वन" दर्ज किया गया है, उन्हें संरक्षित वन खंड में शामिल किया जाए। लेकिन ज़मीनी स्तर पर न तो सीमाओं की सही जांच हुई, न ही ग्रामसभा से कोई चर्चा की गई।

धनपुरा की बंजर और खाली भूमि भी, बिना किसी स्पष्ट प्रक्रिया के, वन विभाग को स्थानांतरित कर दी गई। कुछ वर्षों बाद जब गांव वालों ने उस ज़मीन पर तालाब खुदवाने और चारागाह विकसित करने की योजना बनाई, तो उन्हें बताया गया— "यह ज़मीन अब संरक्षित वन है। यहां कोई काम नहीं हो सकता।"

गांव वाले हैरान थे। न कभी अधिसूचना गांव में पढ़ी गई, न कोई दावा–आपत्ति मंगाई गई, न ही यह देखा गया कि ज़मीन वास्तव में वन थी या नहीं। धीरे-धीरे हालात ऐसे बने कि—

- गांव को निस्तार अधिकार नहीं मिले
- चारागाह और तालाब की योजनाएं रुक गईं
- वनाधिकार कानून के तहत दावे स्वीकार ही नहीं किए गए

- ग्रामीणों पर अतिक्रमण के नोटिस आने लगे

जो ज़मीन कभी समुदाय की जीवनरेखा थी, वह काग़ज़ों में जंगल बन गई और हकीकत में विवाद का कारण।

यह कहानी दिखाती है कि:

- गैर-वन राजस्व भूमि को गलत तरीके से वन विभाग को सौंप दिया गया
- राजस्व और वन अभिलेखों का मिलान नहीं किया गया
- वनाधिकार कानून, PESA और संविधान के प्रावधानों की अनदेखी हुई
- ग्रामसभा की भूमिका पूरी तरह नज़रअंदाज़ की गई

समाधान के संभावित रास्ते:

"अभिलेख से अधिकार तक"

1. अभिलेखों का सत्यापन और वर्गीकरण

- जिला स्तर पर संयुक्त समिति (राजस्व + वन + पंचायत) द्वारा समीक्षा
- यह स्पष्ट किया जाए कि कौन-सी भूमि:
  - राजस्व वन है
  - गैर-वन राजस्व भूमि है
  - सामुदायिक उपयोग की भूमि है

2. ग्रामसभा आधारित सत्यापन

- प्रत्येक प्रभावित गांव में ग्रामसभा प्रस्ताव
- ऐतिहासिक उपयोग, परंपरागत अधिकार और वर्तमान ज़मीनी हकीकत का रिकॉर्ड
- वनाधिकार कानून की धारा 3(1) के तहत सामुदायिक अधिकारों की पहचान

3. गलत रूप से स्थानांतरित भूमि का सुधार

- गैर-वन राजस्व भूमि को संरक्षित वन खंड से डिनोटिफाई करना
- राजस्व रिकॉर्ड में पुनः सही प्रविष्टि
- निस्तार और सामुदायिक उपयोग को बहाल करना

4. कानूनी ढांचे का पालन

- वनाधिकार कानून, PESA और 11वीं अनुसूची के अनुरूप निर्णय
- किसी भी भूमि को वन घोषित करने से पहले:
  - दावा–आपत्ति
  - सार्वजनिक सूचना
  - ग्रामसभा की सहमति अनिवार्य

5. भविष्य के लिए संस्थागत सुधार

- GIS आधारित साझा नक्शे
- राजस्व–वन विभाग के अभिलेखों का नियमित अद्यतन
- जिला स्तर पर विवाद निवारण तंत्र

भाग 7

राजस्व भूमि के अभिलेखित क्षेत्रफल और वास्तविक संरक्षित वन क्षेत्र में असंगति

विषयः

भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 29 के तहत जारी सामान्य अधिसूचनाओं में संरक्षित वन में बदली गई भूमि का वर्णन राजस्व गांवों के अभिलेखों के आधार पर किया गया। कई मामलों में जिन भू-खंडों को संरक्षित वन बनाया गया, उनका अभिलेखित क्षेत्रफल वास्तविक वन क्षेत्र से भिन्न पाया गया। संभवतः यह त्रुटि वन खंड निर्माण के समय भूमि मापन की गलतियों के कारण हुई।

एक कहानी से समझें

कागज में जंगल, जमीन पर गांव

मध्य प्रदेश के बेलनपुर नामक गांव के लोग पीढ़ियों से जंगल के किनारे रहते आए थे। गांव के पास एक पहाड़ी क्षेत्र था, जहाँ कुछ हिस्सों में घना जंगल था और कुछ हिस्सों में ग्रामीण खेती, चराई और निस्तार के लिए ज़मीन का उपयोग करते थे। यह क्षेत्र राजस्व अभिलेखों में अलग-अलग खसरों के रूप में दर्ज था। साल 1980 के दशक में भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 29 के तहत एक सामान्य अधिसूचना जारी हुई, जिसमें बेलनपुर के आसपास के कुछ खसरों को संरक्षित वन घोषित कर दिया गया। यह घोषणा पूरी तरह राजस्व रिकॉर्ड में दर्ज क्षेत्रफल के आधार पर की गई थी, लेकिन समस्या यहीं से शुरू हुई।

जब वन विभाग ने मौके पर जाकर वन खंड का सीमांकन किया, तो मापन में गंभीर त्रुटियाँ हो गईं। पहाड़ी ढलान, पुराने नक्शे, अस्पष्ट सीमाएँ और बिना ग्राम सभा की सहभागिता के किए गए सर्वे के कारण संरक्षित वन का वास्तविक क्षेत्रफल काग़ज़ी रिकॉर्ड से कहीं अधिक निकल आया।

नतीजा यह हुआ कि गांव की कुछ खेती योग्य भूमि, चरागाह, और यहां तक कि पुरानी बस्ती के पास की ज़मीन भी संरक्षित वन के भीतर मान ली गई।

कुछ साल बाद जब गांव में सड़क, हैंडपंप और राशन दुकान की योजना आई, तो अधिकारियों ने कहा—

"यह ज़मीन तो वन रिकॉर्ड में है, यहां विकास कार्य नहीं हो सकते।" ग्रामीण हैरान थे। उनके पास पट्टे थे, नाम राजस्व रिकॉर्ड में था, लेकिन वन नक्शों में वे अतिक्रमणकारी बन चुके थे। न वे जंगल छोड़ सकते थे, न अपने अधिकार साबित कर पा रहे थे। काग़ज़ में जंगल था, लेकिन ज़मीन पर गांव।

यह कहानी दिखाती है कि—

- संरक्षित वन अधिसूचना पुराने और अपूर्ण राजस्व अभिलेखों पर आधारित थी
- भौतिक सत्यापन और पुनः मापन नहीं किया गया
- राजस्व और वन विभाग के नक्शों में समन्वय का अभाव था
- ग्राम सभा को प्रक्रिया में शामिल नहीं किया गया

समाधान के संभावित रास्ते:

"रिकॉर्ड से वास्तविकता तक"

1. संयुक्त पुनः मापन (Joint Resurvey)

- राजस्व, वन विभाग और ग्राम सभा की संयुक्त टीम द्वारा
- आधुनिक तकनीक (GPS, GIS, ड्रोन) से
- संरक्षित वन क्षेत्र का पुनः मापन किया जाए

2. अभिलेखों का मिलान और सुधार

- राजस्व रिकॉर्ड, वन नक्शे और ज़मीनी स्थिति का त्रि-स्तरीय मिलान
- जहाँ क्षेत्रफल में अंतर हो, वहाँ संशोधित अधिसूचना जारी की जाए

3. ग्राम सभा की वैधानिक भूमिका

- वनाधिकार कानून और PESA के तहत

- ग्राम सभा से सत्यापन और सहमति अनिवार्य हो
- स्थानीय ज्ञान को आधिकारिक रिकॉर्ड का हिस्सा बनाया जाए

4. वनाधिकार अधिनियम (FRA) का उपयोग

- प्रभावित क्षेत्रों में
  - सामुदायिक वनाधिकार (CFR)
  - व्यक्तिगत वनाधिकार (IFR)

के दावे स्वीकार किए जाएं

- अधिसूचना से पहले वनाधिकार कानून प्रक्रिया पूरी की जाए

5. डिनोटिफिकेशन / सुधार की प्रक्रिया

- जहाँ स्पष्ट रूप से गैर-वन भूमि शामिल हो गई हो, वहाँ
  - भारतीय वन अधिनियम की धारा 29 के तहत
  - क्षेत्र को संरक्षित वन से हटाने (Correction / Denotification) की प्रक्रिया अपनाई जाए

6. स्थायी समन्वय तंत्र

- जिला स्तर पर
  - राजस्व–वन समन्वय समिति
- नियमित समीक्षा और सार्वजनिक रिकॉर्ड अपडेट

भाग 8

संरक्षित वनों पर जारी पट्टे

विषय:

विभिन्न कानूनों के तहत राजस्व अधिकारियों ने संरक्षित वनों पर पट्टे जारी किए। कुछ मामलों में इन भूमियों के काबिज़ों को अतिक्रमणकारी माना जा रहा है, जबकि कुछ अन्य मामलों में पट्टा धारकों ने बाद में इन भूमियों को बेच भी दिया।

एक कहानी से समझें

पट्टा, जंगल और पहचान

मध्य प्रदेश के बैतूल जिले का छोटा सा गांव कन्हईपुर वर्षों से जंगल और खेती के बीच जीता आया था। गांव के बुजुर्ग बताते थे कि यह ज़मीन कभी राजस्व रिकॉर्ड में बंजर थी, जिसे खेती योग्य बनाने के लिए लोगों को बसाया गया था। साल 1982 में गांव के निवासी रामलाल को तहसील कार्यालय से एक सरकारी पट्टा मिला। पट्टे में साफ लिखा था कि यह भूमि कृषि उपयोग के लिए दी जा रही है। रामलाल ने जंगल साफ किया, कुआँ खोदा और धीरे-धीरे खेत को उपजाऊ बना लिया। यहीं उसका घर बसा, यहीं उसके बच्चे बड़े हुए। समय बीता। 1990 के दशक में वन विभाग ने पुराने रिकॉर्ड के आधार पर पूरे इलाके को संरक्षित वन खंड घोषित कर दिया। राजस्व विभाग ने अपने अभिलेख कभी अपडेट नहीं किए, और वन विभाग ने ज़मीन को वन मान लिया।

एक दिन वन रक्षक गांव पहुँचे और कहा—"आप लोग जंगल में अतिक्रमण करके रह रहे हैं।" रामलाल हैरान रह गया। उसने पट्टा दिखाया। जवाब मिला— "यह तो संरक्षित वन है, यहां कोई निजी अधिकार नहीं हो सकता।

गांव में दो तरह की स्थितियाँ सामने आईं— कुछ लोग, जैसे रामलाल, जिनके पास वैध पट्टे थे, उन्हें भी अतिक्रमणकारी कहा जाने लगा। और कुछ अन्य पट्टाधारकों ने बाद में यह ज़मीन बेच दी थी, जिससे नए खरीदार भी संकट में फँस गए।

नतीजा यह हुआ कि न लोग पूरी तरह मालिक रहे, न वन विभाग स्पष्ट कार्रवाई कर पाया और गांव भय, भ्रम और असुरक्षा में जीने लगा। जंगल भी सुरक्षित नहीं रहा और समुदाय का भरोसा भी टूट गया।

यह कहानी दिखाती है कि—

1. विभागीय समन्वय का अभाव – राजस्व और वन अभिलेखों का मेल नहीं।
2. कानूनी विरोधाभास – एक ही भूमि पर पट्टा भी, और संरक्षित वन की अधिसूचना भी।
3. ग्रामीणों का अपराधीकरण – वैध दस्तावेज़ों के बावजूद अतिक्रमण का ठप्पा।
4. भूमि बाज़ार का विकृत रूप – अस्पष्ट स्थिति में ज़मीन की खरीद–फरोख्त।

समाधान के संभावित रास्ते:

"स्पष्टता, अधिकार और संरक्षण का संतुलन"

1. संयुक्त सत्यापन प्रक्रिया

- राजस्व, वन और पंचायत की संयुक्त समिति द्वारा—
  - पट्टों की वैधता
  - भूमि की वास्तविक स्थिति
  - ऐतिहासिक उपयोग

का भौतिक सत्यापन।

2. कानूनी वर्गीकरण

सत्यापन के बाद भूमि को तीन श्रेणियों में बाँटा जाए—

1. वैध पट्टाधारी भूमि वनाधिकार कानून या राजस्व कानूनों के तहत अधिकारों की पुष्टि।
2. वन-आधारित सामुदायिक उपयोग भूमि सामुदायिक वनाधिकार (CFR)।

3. वास्तविक वन भूमि संरक्षण और पुनर्जीवन के लिए आरक्षित।

3. वनाधिकार कानून का प्रभावी उपयोग

- जहाँ पट्टे और निवास/कृषि पहले से मौजूद हैं, वहाँ—
  - वनाधिकार कानून 2006 के तहत व्यक्तिगत या सामुदायिक अधिकार मान्य किए जाएं।
- ग्राम सभा को निर्णय की केंद्रीय भूमिका।

4. अभिलेखों का अद्यतन

- राजस्व रिकॉर्ड, वन नक्शे और डिजिटल भू-अभिलेखों का एकीकरण।
- डबल एंट्री की समाप्ति।

5. भविष्य की रोकथाम

- संरक्षित वनों पर नए पट्टों पर स्पष्ट रोक।
- यदि अपवाद हों तो—पूर्व वन-अनापत्ति और ग्राम सभा की सहमति अनिवार्य।

भाग 9

निजी भूमि का वन खंडों में शामिल होना

विषयः

1960 के दशक में सर्वेक्षण और सीमांकन की प्रक्रिया के दौरान निजी भूमि को भी वन खंडों में शामिल कर भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 4 के तहत अधिसूचित कर दिया गया। भारतीय वन अधिनियम की धारा 3 और 29 राज्य सरकार को निजी स्वामित्व वाली भूमि को आरक्षित या संरक्षित वन में बदलने या कार्ययोजना (वर्किंग प्लान) में शामिल करने का अधिकार नहीं देती। अतः निजी भूमि का ऐसा समावेशन प्रारंभ से ही शून्य है। अनुमानतः 30,000 हेक्टेयर निजी भूमि इससे प्रभावित है। वन विभाग के निर्देशों के बावजूद, क्षेत्रीय स्तर पर अधिकारी भूमि मालिकों को उनके वैध अधिकारों का प्रयोग करने देने से हिचकते हैं। स्थिति को और जटिल बनाते हुए, ऐसी भूमि पर वनाधिकार कानून, 2006 के तहत व्यक्तिगत अधिकार भी मान्यता प्राप्त कर चुके हैं।

एक कहानी से समझें

खेत जो अचानक जंगल बन गया

मध्य प्रदेश के उमरिया ज़िले का एक छोटा-सा गांव है — धनपुर। इस गांव में रामलाल पटेल नाम का किसान रहता है। रामलाल के पास करीब 5 एकड़ पुश्तैनी ज़मीन है, जिस पर उसके पिता और दादा खेती करते आए थे। जमीन के राजस्व रिकॉर्ड में यह साफ़ तौर पर निजी कृषि भूमि दर्ज थी।

1960 के दशक में जब इलाके में वन सर्वेक्षण और सीमांकन का काम हुआ, तब कई जगहों पर नक्शे अधूरे थे, माप सही नहीं था और ग्रामीणों को इस प्रक्रिया की कोई जानकारी नहीं दी गई। उसी दौरान रामलाल की ज़मीन को पास के जंगल के साथ जोड़कर भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 4 के तहत अधिसूचित कर दिया गया।

इस बात की जानकारी रामलाल को वर्षों तक नहीं हुई। वह खेती करता रहा, फसल उगाता रहा। लेकिन एक दिन वन विभाग के कर्मचारियों ने आकर कहा "यह ज़मीन अब वन खंड में है। यहां खेती करना अवैध है।" रामलाल हैरान रह गया। उसने अपने कागज़ दिखाए — खतौनी, पट्टा, टैक्स रसीद — लेकिन कोई सुनवाई नहीं हुई। उल्टा उसे अतिक्रमणकारी बताया जाने लगा। इसी बीच, कुछ परिवारों को उसी इलाके में वनाधिकार अधिनियम (FRA), 2006 के तहत व्यक्तिगत वनाधिकार भी मिल गए। अब स्थिति और उलझ गई, एक ही भूमि पर निजी मालिकाना दावा, वन विभाग का वन खंड दावा, और वनाधिकार कानून के तहत व्यक्तिगत अधिकार।

रामलाल की ज़मीन न खेती में सुरक्षित रही, न वन के रूप में स्पष्ट। वह न तो बैंक से कर्ज़ ले पाया, न सरकारी योजनाओं का लाभ मिला। उसका खेत कागज़ों में "जंगल" बन चुका था, और वह खुद अपने ही खेत में "अवैध" हो गया।

यह कहानी दिखाती है कि—

1. निजी भूमि को गलत तरीके से वन खंडों में शामिल करना
2. भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 3 और 29 के विपरीत कार्यवाही
3. सर्वेक्षण और सीमांकन में त्रुटियाँ
4. विभागीय अभिलेखों का अद्यतन न होना
5. वनाधिकार कानून अधिकारों और निजी स्वामित्व के बीच टकराव
6. ज़मीनी स्तर पर अधिकारियों की निर्णय लेने में हिचक

समाधान के संभावित रास्ते:

"कानूनी स्पष्टता, अभिलेख सुधार, समन्वय"

1. निजी भूमि की पहचान और सत्यापन

- राजस्व अभिलेखों (खतौनी, नक्शा, मिसल बंदोबस्त) के आधार पर निजी भूमि की सूची तैयार की जाए
- ग्राम सभा की पुष्टि अनिवार्य हो

2. अवैध अधिसूचनाओं की समीक्षा

- भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 4 के तहत निजी भूमि पर की गई अधिसूचनाओं को प्रारंभ से ही शून्य मानते हुए राज्य स्तर पर समीक्षा समिति बने
- ऐसी भूमि को वन अधिसूचना से बाहर किया जाए

3. राजस्व–वन अभिलेखों का समन्वय

- दोनों विभागों के संयुक्त सर्वे से नक्शों और रिकॉर्ड का सुधार
- GIS आधारित मैपिंग से वास्तविक स्थिति दर्ज की जाए

4. वनाधिकार कानून अधिकारों का समायोजन

- जहाँ वनाधिकार कानून के तहत अधिकार दिए जा चुके हैं, वहाँ यह स्पष्ट किया जाए कि भूमि का मूल स्वरूप क्या है
- निजी भूमि पर दिए गए वनाधिकार कानून अधिकारों की पुनः कानूनी जाँच हो

5. जमीनी अधिकारियों के लिए स्पष्ट दिशा-निर्देश

- राज्य सरकार द्वारा स्पष्ट आदेश कि वैध निजी भूमि पर मालिकों को अधिकार प्रयोग से न रोका जाए
- अतिक्रमण की कार्रवाई केवल प्रमाणित मामलों में ही हो

6. ग्राम सभा की केंद्रीय भूमिका

- ग्राम सभा को भूमि सत्यापन, विवाद समाधान और निगरानी में निर्णायक भूमिका दी जाए

भाग 10

धारा 34(A) के तहत अधिसूचित वन भूमि पर वनाधिकार प्रमाणपत्र

विषय:

वनाधिकार कानून, 2006 के तहत भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 34(A) के अंतर्गत अधिसूचित वन भूमि पर अधिकार प्रमाणपत्र जारी किए गए हैं। वनाधिकार कानून, 2006 की धारा 2(घ) "वन भूमि" को किसी भी वन क्षेत्र के भीतर आने वाली भूमि के रूप में परिभाषित करती है—जिसमें अवर्गीकृत, बिना सीमांकन वाले, विद्यमान या माने गए वन, संरक्षित/आरक्षित वन, अभयारण्य और राष्ट्रीय उद्यान शामिल हैं।

अर्थात वनाधिकार कानून केवल उसी भूमि पर लागू होता है जो वन क्षेत्र के अंतर्गत आती हो और जिस पर वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 लागू होता है। चूँकि डीनोटिफाइड भूमि पर अधिकार प्रमाणपत्र जारी किए गए, इसलिए ऐसे सभी मामलों की समीक्षा कर संबंधित व्यक्तियों के भूमिस्वामी अधिकार मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता, 1959 के प्रावधानों के अनुसार मान्यता दी जानी चाहिए। जब तक निजी अधिकार (भूमिस्वामी) बहाल न हों, तब तक यथास्थिति बनाए रखी जानी चाहिए।

एक कहानी से समझें

धारा 34(A) की जमीन और रामलाल का वनाधिकार प्रमाणपत्र

मध्य प्रदेश के एक छोटे से गांव धनपुर में रामलाल का परिवार पीढ़ियों से खेती करता आ रहा था। यह ज़मीन कभी जंगल नहीं थी, बल्कि गांव के राजस्व अभिलेखों में दर्ज साधारण कृषि भूमि थी। वर्षों पहले यह क्षेत्र भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 34(A) के तहत "नियंत्रित वन भूमि" के रूप में अधिसूचित कर दिया गया था, लेकिन बाद में इसे डी-नोटिफाई कर दिया गया।

समय बीतता गया। काग़ज़ों में ज़मीन की स्थिति स्पष्ट नहीं रही। वन विभाग इसे अब भी वन भूमि मानता रहा, जबकि राजस्व विभाग के रिकॉर्ड में यह निजी भूमि थी। इसी भ्रम के बीच वनाधिकार अधिनियम, 2006 लागू हुआ।

ग्राम सभा ने वनाधिकार कानून के तहत दावे मँगवाए। रामलाल ने भी आवेदन किया। जाँच किए बिना, यह देखे बिना कि ज़मीन वास्तव में वन भूमि की परिभाषा (वनाधिकार कानून की धारा 2(घ)) में आती है या नहीं, उसे वनाधिकार प्रमाणपत्र (Individual Forest Right) जारी कर दिया गया। अब स्थिति और उलझ गई।

रामलाल पूछने लगा— "अगर यह वन भूमि है, तो मेरे पास भूमिस्वामी अधिकार क्यों नहीं?

और अगर यह निजी भूमि है, तो मुझे वनाधिकार प्रमाणपत्र क्यों दिया गया?" वन विभाग उसे वन निवासी मानता है, राजस्व विभाग उसे अब भी काबिज़ नहीं मानता, और योजनाएँ दोनों के बीच अटकी हुई हैं।

यह कहानी दिखाती है कि—

1. धारा 34(A) की भूमि का गलत वर्गीकरण
2. डीनोटिफिकेशन के बाद भी भूमि को वन मानते रहना

3. वनाधिकार कानून का प्रयोग ऐसी भूमि पर करना, जो कानूनी रूप से वन भूमि नहीं है

4. राजस्व और वन अभिलेखों में समन्वय का अभाव

समाधान के संभावित रास्ते:

समीक्षा

- राज्य स्तर पर सभी ऐसे मामलों की सूची बनाई जाए जहाँ..
    - धारा 34(A) की भूमि पर वनाधिकार कानून के तहत अधिकार प्रमाणपत्र जारी किए गए हैं
    - यह जाँचा जाए कि भूमि वास्तव में वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के दायरे में आती है या नहीं

भूमि की सही कानूनी पहचान

- यदि भूमि डीनोटिफाइड है और वन भूमि नहीं है, तो वनाधिकार कानून लागू नहीं माना जाए
- ऐसी भूमि को मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता, 1959 के तहत निजी भूमि माना जाए

भूमिस्वामी अधिकारों की बहाली

- वनाधिकार कानून के तहत जारी गलत प्रमाणपत्रों की समीक्षा और संशोधन
- संबंधित व्यक्ति को "वनाधिकार धारक" नहीं, बल्कि वैध भूमिस्वामी के रूप में मान्यता दी जाए

यथास्थिति (Status Quo)

- जब तक यह प्रक्रिया पूरी न हो: न तो बेदखली न ही कोई दंडात्मक कार्रवाई, भूमि पर यथास्थिति बनाए रखी जाए

संस्थागत समाधान

- राजस्व, वन और पंचायत की संयुक्त समिति
- GIS आधारित नक्शों से अभिलेखों का मिलान
- ग्राम सभा को केवल वास्तविक वन भूमि के मामलों में ही वनाधिकार कानून प्रक्रिया में शामिल किया जाए

भाग 11

डीनोटिफाइड भूमि पर निस्तारण अधिकार

विषयः

मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में 72,000 गांव हैं, जिनमें से 45,000 से अधिक गांवों की भूमि भारतीय वन अधिनियम की धारा 34(A) के तहत डीनोटिफाइड है। इन गांवों के अभिलेख अब तक अद्यतन नहीं हुए हैं। वर्ष 1979 में म.प्र. दखल रहित भूमि अधिनियम, 1970 की धारा 5 में संशोधन कर ऐसी डीनोटिफाइड भूमि को भूमिहीनों में वितरित करने का प्रावधान किया गया था। किंतु 34(A) के तहत अभिलेख अद्यतन न होने के कारण, धारा 5 के संशोधन का क्रियान्वयन संभव नहीं हो सका।

एक कहानी से समझें

लौटता हुआ हक़

छत्तीसगढ़ के एक दूरस्थ इलाके में बसे बनसागर गांव की पहचान वर्षों तक "वन-ग्राम" के रूप में बनी रही। गांव के बुजुर्ग बताते थे कि उनके पूर्वज पीढ़ियों से यहां खेती करते आए हैं। लेकिन सरकारी काग़ज़ों में यह भूमि अब भी भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 34(A) के तहत वन भूमि दर्ज थी—हालाँकि वर्षों पहले इसे डी-नोटिफाई कर दिया गया था। गांव के अधिकांश लोग भूमिहीन थे। वे दूसरों की ज़मीन पर मज़दूरी करते या जंगल से लघु वनोपज बीनकर जीवन चलाते। 1979 में जब यह ख़बर फैली कि डीनोटिफाइड भूमि को भूमिहीनों में बाँटने का प्रावधान कानून में जोड़ दिया गया है, तब बनसागर के लोगों को लगा कि अब उनका इंतज़ार खत्म होगा।

लेकिन साल बीतते गए। जब भी गांव के लोग पटवारी या तहसील कार्यालय जाते, उन्हें यही जवाब मिलता "रिकॉर्ड में यह ज़मीन अब भी वन की है। निस्तारण संभव नहीं।" वन विभाग कहता "जब तक राजस्व रिकॉर्ड अपडेट नहीं होंगे, हम कुछ नहीं कर सकते।" राजस्व विभाग कहता "जब तक वन विभाग लिखित में नहीं देगा, रिकॉर्ड नहीं बदले जा सकते।" इस बीच, कुछ परिवारों को वनाधिकार कानून, 2006 के तहत अधिकार प्रमाणपत्र भी मिल गए, लेकिन वे भी अधर में लटके रहे—न खेती की अनुमति, न बैंक से ऋण, न पक्का घर।

एक दिन गांव की सीमा बाई, जो स्वयं सहायता समूह की सदस्य थीं, ने सवाल उठाया "अगर ज़मीन अब वन नहीं है, तो हमें वन कानून के तहत अधिकार क्यों मिल रहे हैं? और अगर यह राजस्व भूमि है, तो हमें पट्टा क्यों नहीं?" यह सवाल पूरे गांव का सवाल बन गया।

यह कहानी दिखाती है कि—

1. धारा 34(A) के तहत डीनोटिफिकेशन तो हुआ, लेकिन राजस्व अभिलेख अद्यतन नहीं हुए।
2. 1979 में किए गए कानूनी संशोधन का लाभ इसलिए नहीं मिल पाया क्योंकि भूमि काग़ज़ों में अब भी वन दर्ज थी।
3. वन और राजस्व विभागों के बीच समन्वय का अभाव।

4. लोग दो कानूनों—भारतीय वन अधिनियम और वनाधिकार कानून—के बीच फँस गए।

समाधान के संभावित रास्ते:

1. डीनोटिफाइड भूमि की पहचान और सूचीकरण

- जिला स्तर पर धारा 34(A) के तहत डीनोटिफाइड गांवों और भूमि की संयुक्त सूची तैयार की जाए।
- यह सूची वन और राजस्व—दोनों विभागों द्वारा प्रमाणित हो।

2. अभिलेखों का तत्काल अद्यतन

- राजस्व रिकॉर्ड (खसरा, नक्शा, बी-1) में भूमि को वन से हटाकर राजस्व भूमि के रूप में दर्ज किया जाए।
- इसे समयबद्ध प्रशासनिक आदेश से पूरा किया जाए।

3. वनाधिकार कानून मामलों की समीक्षा

- जिन डीनोटिफाइड भूमियों पर वनाधिकार कानून के तहत अधिकार प्रमाणपत्र जारी हुए हैं, उनकी पुनर्समीक्षा हो।
- ऐसे मामलों में भूमिस्वामी अधिकार मध्य प्रदेश/छत्तीसगढ़ भू-राजस्व संहिता के तहत बहाल किए जाएं।

4. 1979 संशोधन का क्रियान्वयन

- म.प्र. दखल रहित भूमि अधिनियम, 1970 की धारा 5 (संशोधित) के अनुसार डीनोटिफाइड भूमि का निस्तारण भूमिहीन परिवारों के पक्ष में किया जाए।

5. ग्राम सभा की निर्णायक भूमिका

- निस्तारण की प्रक्रिया में ग्राम सभा की अनुशंसा अनिवार्य हो। प्राथमिकता: स्थानीय भूमिहीन, वन आश्रित और कमजोर परिवार।

6. यथास्थिति और संरक्षण

- जब तक अभिलेख और अधिकार स्पष्ट न हों, तब तक न बेदखली हो, न नई कार्यवाही, भूमि उपयोग स्थानीय आजीविका और संरक्षण के सिद्धांतों के अनुरूप हो।

संदर्भ 1

वन व्यवस्थापन और आवश्यक जानकारी

1988 में अनुविभागीय अधिकारी राजस्व को वन व्यवस्थापन अधिकारी नियुक्त कर भा.व.अ.1927 की धारा 5 से 19 तक की जांच के लिए अधिकृत किया इससे संबंधित संलग्न नोट्स की विवरणिका :-

1.	**वनखण्ड में शामिल भूस्वामी हक की भूमियों में पर प्रतिवेदन एवं जांच का प्रकरण**	**2**
2.	**वनमंडल से आवश्यक जानकारी**	**3**
3.	**धारा 29 एवं धारा 4 में अधिसूचित भूमि**	**4**
4.	**राजस्व पटवारी की महत्वपूर्ण भूमिका**	**5**
5.	**अनुविभागीय अधिकारी/ वनव्यवस्थापन अधिकारी की भूमिका**	**6**
6.	**संविधान कानून, न्यायालीन आदेश**	**7**
7.	**वन खण्ड में शामिल भूमि की जानकारी**	**8**

वनखण्ड में शामिल भूस्वामी हक की भूमियों पर प्रतिवेदन एवं जांच का प्रकरण

वनमंडल से भूस्वामी हक की निजी भूमियों से संबंधित निम्न लिखित बिन्दुओं पर प्रतिवेदन बुलवाना आवश्यक है:-

1. किस वनखण्ड में किस ग्राम के किस किसान के किस खसरा नम्बर कितना भूस्वामी हक में दर्ज रकबा शामिल किया गया है।
2. भूस्वामी हक में दर्ज कितने रकबे को वर्किंग प्लान, एरिया रजिस्टर, वनकक्ष इतिहास एवं वनकक्ष मानचित्र में दर्ज कर संरक्षित वन प्रतिवेदित किया जा रहा है।
3. भूस्वामी हक में दर्ज किस खसरा नम्बर का कितना रकबा वन विभाग अर्जित करना चाहता है।
4. भूस्वामी हक में दर्ज जिस भूमि को अर्जित करना चाहता है उस भूमि के अर्जन का विधिवत प्रस्ताव भूमि अर्जन अधिनियम 2013 के अनुसार बनाकर प्रस्तुत किया जाए।
5. भूस्वामी हक में दर्ज निजी भूमि को यदि वनमंडल स्वयं भी वनखण्ड के बाहर करना चाहता है उस स्थिति में :-
   - संशोधित प्रस्ताव एवं संशोधित वन कक्ष मानचित्र प्रस्तुत करें।
   - भूस्वामी हक में दर्ज भूमियों से संबंधित राज्य मंत्रालय के आदेश दिनांक 11 जूलाई 2008 के अनुसार वनमंडल से प्रेषित प्रतिवेदन की प्रति वनमंडल प्रस्तुत करें।
6. वनमंडल से निजी भूमियों के संबंध में यह जानकारी प्राप्त करने के बाद ही धारा 6 की उद्घोषणा जारी की जानी चाहिए।
   - वन विभाग ने अपने किसी भी अभिलेख में भूमियों की राजस्व अभिलेख में दर्ज जंगल मद एवं गैर जंगल मद की प्रविष्टी दर्ज नहीं की, सार्वजनिक एवं निस्तारी प्रयोजन की भी कोई प्रविष्टी दर्ज नहीं की है।
   - 1988 में धारा 4 की संशोधित अधिसूचना के अनुसार वन व्यवस्थापन अधिकारी द्वारा प्रकरण पंजी या दायरा पंजी में दर्ज किस क्रमांक, किस मद का प्रकरण अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) के समक्ष किस दिनांक को प्रस्तुत किया गया यह वनमंडल प्रतिवेदित करें।
   - 1988 में अधिसूचित वनखण्डों की धारा 5 से 19 तक की जांच के प्रकरण अनुविभागीय अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया हो तो कारण बतावें।

वनमंडल से आवश्यक जानकारी

1. वनखण्ड की ब्लाक हिस्ट्री एवं उसमें संलग्न मानचित्र की प्रति
2. वनखण्ड में शामिल भूमि से संबंधित ग्रामवार संरक्षित वन सर्वे डिमारकेशन रिपोर्ट की प्रति
3. वनखण्ड को पी.एफ. एरिया रजिस्टर, पी.एफ. वनकक्ष इतिहास एवं पी.एफ. वनकक्ष मानचित्र में शामिल किए जाने से संबंधित राज्य मंत्रालय या वन मुख्यालय से जारी आदेश की प्रति पी.एफ. एरिया रजिस्टर, पी.एफ. वनकक्ष इतिहास, पी.एफ.वनकक्ष मानचित्र की प्रति
4. वनखण्ड में शामिल भूमि में से वन विभाग के कब्जे की भूमि एवं वन विभाग के कब्जे से बाहर की भूमि पर प्रतिवेदन
5. वनखण्ड को वर्किंग प्लान में शामिल करने, वनखण्ड की भूमि पर कब्जा किए जाने के संबंध में वन व्यवस्थापन अधिकारी को पूर्व में दी गई सूचना की प्रति।
6. वनखण्ड को वर्किंग प्लान में शामिल कर कब्जा किए जाने के संबंध में वन व्यवस्थापन अधिकारी से ली गई अनुमति की प्रति

धारा 29 एवं धारा 4 में अधिसूचित भूमि

राजस्व ग्रामों की राजस्व अभिलेखों दर्ज जमीनों को भा.व.अ.1927 की धारा 29 एवं धारा 4 के अनुसार राजपत्र में अधिसूचित किया गया जिनकी धारा 5 से 19 की जांच लम्बित हे।

यह समस्त जमीने राजस्व अभिलेख खसरा पंजी में दो तरह से दर्ज है:-

- पहला तो यह जमीन जंगल और गैर जंगल मद में दर्ज है।
- दूसरा यही जमीन सार्वजनिक, निस्तारी प्रयोजन के लिए भी दर्ज है।

धारा 4 में अधिसूचित वनखण्ड की सीमा लाईन वर्ष 1970-71 में पटवारी मानचित्र में काली स्याही से दर्ज की गई है।

धारा 5 से 19 तक की जांच के लिए लम्बित भूमियों को वर्किंग प्लान, पी.एफ.एरिया रजिस्टर, पी.एफ. वनकक्ष इतिहास एवं पी.एफ. वनकक्ष मानचित्र में वन विभाग ने शामिल कर लिया।

- वनमंडल में धारा 29 एवं धारा 4 में अधिसूचित भूमियों से संबंधित निम्न लिखित अभिलेख उपलब्ध होने चाहिए।
    - धारा 29 के तहत प्रकाशित अधिसूचना की प्रति
    - संरक्षित वन सर्वे डिमारकेशन रिपोर्ट
    - संरक्षित वन क्षेत्रफल पंजी
    - संरक्षित वन ब्लाक हिस्ट्री
    - धारा 4 के तहत प्रकाशित अधिसूचना
    - संरक्षित वन सर्वे कम्पलीशन रिपोर्ट
    - संरक्षित वन वर्किंग स्कीम
    - पी.एफ. एरिया रजिस्टर, एवं वनकक्ष इतिहास
    - वनखण्ड में से आवंटित, अन्तरित भूमि के आदेश
    - वनखण्ड में से धारा 34अ में डीनोटीफाईड भूमि की अधिसूचना
- ब्लाक हिस्ट्री में किस खसरा नम्बर का कितना रकबा वनखण्ड में शामिल किया गया है, उसमें से कितना रकबा अहस्तानान्तरित है, कितना रकबा भूस्वामी हक का है यह ब्यौरा दर्ज किया गया था।

राजस्व पटवारी की महत्वपूर्ण भूमिका

धारा 4 में अधिसूचित वनखण्डो के प्रकरण वनमंडल ने संबंधित अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) के समक्ष प्रस्तुत नहीं किए है इसलिए प्रकरण बनाकर प्रस्तुत किए जाने में वन मंडल का सहयोग किया जाना राजस्व विभाग के लिए सबसे पहली आवश्यकता, सबसे पहली प्राथमिकता है।

इस कार्यवाही में ग्राम पटवारी एवं राजस्व अभिलेख, पटवारी मानचित्र में दर्ज ब्यौरों की एक मात्र भूमिका है।

1. 1970-71 में पटवारी मानचित्र में वनखण्ड की सीमा लाईन काली स्याही से दर्ज कर ली गई है।
   - पटवारी मानचित्र में काली स्याही से वनखण्ड की सीमा लाईन दर्ज करवाई जाकर धारा 5 से 19 तक की जांच के औचित्य को भी नकार दिया गया।
   - काली स्याही से लाईन दर्ज कर भू-राजस्व संहिता 1959 एवं बन्दोबस्त नियमावली के प्रावधान को भी नकार दिया गया।
2. पटवारी मानचित्र में दर्ज वनखण्ड का ट्रेसिग क्लाथ पर मानचित्र बनाया जाना आवश्यक है।
3. वनखण्ड में शामिल भूमियों का निम्न प्रारूप में खसरा पंजी से ब्यौरा दर्ज किया जाना आवश्यक है:-

वनखण्ड में शामिल		वनखण्ड के बाहर छोड़ा रकबा	भूमि की मद	भूमि का प्रयोजन
खसरा न.	रकबा			

निजी भूमि हो तो किसान का नाम	भूमि पर कब्जे की स्थिति	भूमि पर निर्माण या वृक्षारोपण की स्थिति	भूमि से काटी वनोपज की स्थिति

4. वनखण्ड में शामिल भूमि में से यदि भूमि किसी को आवंटित या अन्तरित कर कब्जे में सौपी गई हो तो उस पर पटवारी का प्रतिवेदन।
5. वनखण्ड में शामिल भूमि पर यदि किसी भी योजना के अनुसार पट्टा दिया हो, वन अधिकार पत्र दिया हो तो उसका विवरण, प्रतिवेदन।

“अनुविभागीय अधिकारी/वनव्यवस्थापन अधिकारी की भूमिका”

आयुक्त आदिवासी विकास मध्य प्रदेश शासन ने अपने आदेश क्रमांक 621/वन अधि/15/136 दिनांक 16 अप्रैल 2015 में “अनुविभागीय अधिकारी की तीन अलग-अलग कानूनों के तहत अपनाई जा रही तीन भूमिकाओं का उल्लेख किया है।

“अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) को मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता 1959 के तहत विशेष अधिकार दिये गये हैं। वन व्यवस्थापन अधिकारी के रूप में भारतीय वन अधिनियम 1927 की धारा 5 से 19 तक की लंबित जांच एवं कार्यवाही के अधिकार अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) को प्रदान किये गये हैं। वन अधिकार अधिनियम 2006 के तहत उपखण्ड स्तरीय वन अधिकार समिति का अध्यक्ष भी अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) को नामांकित किया गया है। इस प्रकार अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) की तिहरी भूमिका होने से वन अधिकार अधिनियम 2006 की धारा 3(1) कंडिका ख,ग,घ एवं कंडिका ड़ में उल्लिखित सामुदायिक वन अधिकार वन निवासियों को प्रदान करने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

भा.व.अ.1927 की धारा 5 से 19 तक की जांच के लिए लम्बित भूमियों में से यदि भूस्वामी हक की भूमि को अलग रखा जाए तो शेष भूमि पटवारी मानचित्र एवं समस्त राजस्व अभिलेखों में गैरखाते की दखल रहित भूमि दर्ज है।

राजस्व अभिलेख में इन दखल रहित भूमियों को राजस्व विभाग एक साथ दो ब्यौरे के साथ दर्ज करता है।

पहला तो वह इन जमीनों को मदवार दर्ज करता है।

दूसरा इन्हीं जमीनों को प्रयोजनवार दर्ज करता है।

संविधान कानून, न्यायालीन आदेश

इन भूमियों से संबंधित 1950 से 2018 तक कानून बने, कानून एवं संविधान में संशोधन हुए सर्वोच्च अदालत ने दो महत्वपूर्ण प्रकरण में आदेश दिए।

1. 1950 में इन्हीं जमीनों को तत्कालीन शासकों से अर्जित किया गया।
2. 1951 में इन्हीं जमीनों बाबत् संविधान में पहला संशोधन किया।
3. 1959 में भू-राजस्व संहिता के अध्याय 18 में प्रावधान किए गए।
4. 1993 में इन्हीं जमीनों बाबत् संविधान की 11वीं अनूसूची में प्रावधान हुए
5. 1996 में इन्हीं जमीनों के लिए पेसा कानून में प्रावधान किए गए।
6. 1996 में इन्हीं जमीनों में से बड़े झाड़, छोटे झाड़ के जंगल मद में दर्ज जमीनों बाबत् सर्वोच्च अदालत ने या.क्र. 202/95 में आदेश दिया।
7. 2006 में वन अधिकार कानून की धारा 3(1)ख में प्रावधान किए
8. 2011 में इन्हीं जमीनों में से प्रयोजनों बाबत् सर्वोच्च अदालत ने सिविल अपील प्रकरण क्रमांक 19869/2010 में दिनांक 28/1/2011 को आदेश दिया।
9. 2011 में विधानसभा ने भू-राजस्व संहिता की धारा 237 में संशोधन किया
10. 2018 में भू-राजस्व संहिता में व्यापक संशोधन किए गए।

संविधान, कानून एवं न्यायालीन आदेशों में इन भूमियों को भारतीय वन अधिनियम 1927 की धारा 29 धारा 4 एवं धारा 20 में अधिसूचित करने का कोई अधिकार या कोई प्रावधान या कोई छूट उल्लेखित नहीं की है।

भू-राजस्व संहिता 1959 के अध्याय 18 में या धारा 237 में अनुविभागीय अधिकारी को दखल रहित भूमियों बाबत् आरक्षित वन बनाने की जांच कर आरक्षित वन अधिसूचित करने का आदेश दिए जाने का कोई प्रावधान या कोई अधिकार या कोई छुट नहीं दी गई।

अनुविभागीय अधिकारी राजस्व धारा 237(1) में आरक्षित किस-किस प्रयोजन की जांच कर उसे कम करने या समाप्त करने या परिवर्तन करने का अधिकार उल्लेखित 10 प्रावधानों में रखता है इस पर गंभीरता से विचार करना होगा।

वन खण्ड का नाम .... वनखण्ड का कुल रकबा ....

ग्राम का नाम	ग्राम का कुल रकबा			
खसरा न.	रकबा	भूमि की मद	भूमि का प्रयोजन	किसान का नाम

नोट:- वनखण्ड में शामिल प्रत्येक ग्राम की इसी तरह अलग-अलग ब्यौरा दें।

ए:- वनखण्ड में से अन्तरित, आवंटित की गई भूमि का ब्यौरा दें :-

1. अन्तरित भूमि का खसरा नम्बर .... रकबा ....
2. अन्तरण का आदेश क्रमांक दिनांक
3. अन्तरण का कारण

अन्तरित भूमि बाबत् अन्य कोई विवरण

बी:- वनखण्ड में से डीनोटीफाईड की गई भूमि का ब्यौरा दें :-

1. डीनोटीफिकेशन की दिनांक
2. डीनोटीफाईड भूमि का खसरा नम्बर .... रकबा ....
3. डीनोटीफिकेशन का कारण

सी:- वनखण्ड में शामिल निजी भूमि का ब्यौरा दें :-

1. निजी भूमि का खसरा नम्बर .... रकबा ....
2. भूस्वामी किसान का नाम।

3. निजी भूमि से काटी गई वनोपज का ब्यौरा सूची बनाकर दें।

4. निजी भूमि पर किए गए निर्माण का ब्यौरा दें।

5. निजी भूमि पर किए वृक्षारोपण का ब्यौरा दें।

6. निजी भूमि बाबत् अन्य कोई विवरण हो तो वह दें।

डीः- 1. संरक्षित वन अधिसूचित किए जाने का दिनांक

2. अधिसूचना में किन मदों की भूमि संरक्षित वन अधिसूचित की गई है।

3. अधिसूचना में किन-किन मदों की भूमि शामिल की गई है।

ईः- वनखण्ड को वर्किंग प्लान में शामिल करने का ब्यौरा दें।

1. वनखण्ड को किस अवधि के वर्किंग प्लान में शामिल किया गया।

2. वनखण्ड को किस वनकक्ष में विभाजित कर कितना रकबा किस कक्ष का वर्किंग प्लान में दर्ज किया गया।

3. वनखण्ड में शामिल भूमि से संबंधित पी .एफ. एरिया रजिस्टर में कौन-कौन सी प्रविष्टी दर्ज की गई।

4. वनखण्ड में शामिल कितनी भूमि पर वन विभाग का कब्जा है।

5. वनखण्ड में शामिल कितनी निजी भूमि पर वन विभाग का कब्जा है।

6. वनखण्ड में शामिल कितनी निजी भूमि पर किसान का कब्जा है।

7. वनखण्ड में शामिल कितनी भूमि को संरक्षित वन प्रतिवेदित किया जा रहा है।

एफः- उपरोक्त विवरण के अलावा अन्य कोई विवरण जो विभाग देना चाहता है।

» परिचय «

अनिल गर्ग
सामाजिक कार्यकर्ता
लेखक, शोधार्थी और वकील

बैतूल के एक राजनैतिक परिवार में जन्म। वकालत उन्हें विरासत में मिली। वकालत को लोगों के अधिकार के लिए अपना माध्यम बनाया। संघर्ष की शुरुआत में पत्रकारिता भी की, और कई प्रतिक्षित अखबारों में लेखों ने खलबली मचाई। जंगल जमीन को अपने अध्ययन के केन्द्र में लाए। केवल भावनात्मक आधार पर नहीं, पूरा अध्ययन कानूनी/तथ्यात्मक दृष्टिकोण से, दस्तावेजों के आधार पर किया। लोगों के बीच **'काका'** नाम से ख्यात **अनिल गर्ग** की सबसे बड़ी खासियत यही है कि यह हमेशा तथ्यों, और संदर्भों के साथ अपनी बात रखते हैं। जंगल जमीन के मामलों में यह म.प्र. और छतीसगढ़ के चुनिंदा विशेषज्ञों में शुमार है। कभी अपने सिद्धांतों से समझौता न करने वाले काका अपनी बेबाक बोली के कारण कई लोगों से अपने संबंध खराब करने के लिए भी जाने जाते हैं, बावजूद इसके वह बोलना नहीं छोड़ते। यही उनकी शैली है। काका के कड़क मिशन के पीछे एक बेहतरीन इंसान है, जो आमजन के दुख-दर्द को लेकर बेहद संजीदा है।

एकता परिषद की पदयात्रा के दौरान पदयात्रा के संदर्भ में अनिल जी ने पांच किताबें लिखीं। वन अधिकार बिल पारित होने पर जंगल जमीन ऐतिहासिक अन्याय, जिम्मेदार कौन' शीर्षक से किताब लिखी। एकता परिषद की 2007 की यात्रा के दौरान भी उन्होंने एक किताब लिखी। विंध्य और बुंदेलखंड के भूमि विवादों पर एक किताब प्रकाशित हुई। राज्यपाल और राष्ट्रपति की याचिकाओं पर एक किताब लिखी। एक किताब 'आरेंज एरिया अंग्रेजी में भी प्रकाशित हुई।

अनिल गर्ग के बेटे निकुंज ने कल की पढ़ाई पूरी कर ली है और अब वह जंगल जमीन के मामलों पर काम को आगे बढ़ा रहे हैं। बेटी पलक गर्ग ने अपनी इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूरी कर ली है और वह अपने कैरियर को आगे बढ़ा रही है। जीवन संगिनी उमा गर्ग का हर पल साथ मिला।